जनवरी १९९५ हिंदी पत्रिका में प्रकाशित

तथागत का पार्थिव शरीर

२५३८ वर्ष पूर्व, वैशाख पूर्णिमा की उदास चांदनी रात। यह रात पूरी होते-होते तथागत जीवन के ८० वर्ष पूरे करके महापरिनिर्वाण को प्राप्त होंगे। तीन महीने पूर्व उन्होंने यही भविष्यवाणी की थी और वैशाली से पश्चिम की ओर लंबी यात्रा पर चल पड़े थे। कुशीनगर की राजधानी के बाहर एक युग्म शाल वृक्ष के तले तथागत एक मचान पर लेटे हैं। उन्होंने परिनिर्वाण के लिए यही स्थान चुना है। समीप के नगर में यह सूचना फैल गई थी कि आज की रात पूरी होते-होते भगवान अंतिम सांस छोड़ेंगे। इसलिए रात भर तथागत के दर्शन के लिए भिक्षु और गृहस्थ नागरिकों का तांता लगा रहा।

तथागत का शरीर अत्यंत क्लांत है, परंतु प्रज्ञा-भरा मानस अत्यंत सजग है और करुणा से लबालब भरा है। चेहरे पर परम शांति समायी हुई है, अतुलनीय कांति छायी हुई है। झुंड के झुंड लोग आते हैं और भगवान को नमस्कार कर एक ओर बैठ जाते हैं।

शनैः शनैः रात्रि का अवसान समीप आ रहा है। नभोमंडल और भूमंडल के सारे वायुमंडल में विषाद की तरंगें बिखराते हुए पूर्णिमा का चांद भारी मन से पश्चिमी क्षितिज की ओर आगे बढ़ रहा है। पूर्वी क्षितिज पर ऊषा की जरा-जरा लाली झलकने लगी है। महापरिनिर्वाण का समय अत्यंत समीप आ गया है। सूर्योदय के पूर्व तथागत का महाप्रयाण होगा। चारों ओर गहन प्रश्रब्धि और प्रशांति छायी हुई है। सभी मौन होकर तथागत के चेहरे पर निर्निमेष दृष्टि लगाये हुए हैं। अनंत बोधि की महिमा-मंडित गौरव-गरिमा को वहन करने वाला यह भव्य भौतिक शरीर चंद मिनटों में ही निष्प्राण हो जाने वाला है। दुर्बल मन के लोग इस चिंता से व्यथित थे कि इस महाप्रयाण के बाद ऐसे महापुरुष का सानिध्य कहां प्राप्त होगा?

यकायक आनंद के मन में एक प्रश्न उठा। गहन नीरवता को भंग करते हुए उन्होंने तथागत से पूछा, "भंतेभगवान, आपके निष्प्राण हुए भौतिक शरीर का हम किस प्रकार सम्मान करेंगे?"

भगवान ने मुस्करा कर कहा, "आनंद, तुम इस शरीर के बारे में निश्चिंत रहो! तुम्हें तो परम सत्य की उपलब्धि के लिए तपःसाधन में ही रत रहना है। श्रद्धालु गृहस्थ इस पार्थिव शरीर का मान-सम्मान, पूजन-अर्चन उसी प्रकार करेंगे, जिस प्रकार किसी चक्रवर्ती सम्राट अथवा किसी प्रत्येक बुद्ध अथवा किसी क्षीणास्रव अरहंत के निष्प्राण शरीर का किया जाना चाहिए।"

भगवान ने आगे समझाया कि श्रद्धालु लोग उनके मृत शरीर को एक नये वस्त्र में लपेट कर, उस पर नयी धुनी हुई रूई चढ़ा कर और पुनः नये कपड़े से ढक कर तेल-भरी द्रोणी में रखेंगे और चिता पर इसका दाह-संस्कार करेंगे। दाह-क्रिया के पश्चात जो देह-धातु बचेगी उस पर शासक लोग नगर के चौराहों पर स्तूप बनायेंगे। वहां श्रद्धालु गृहस्थ भक्तिभावपूर्वक पूजन-अर्चन करेंगे और पुण्यलाभी होंगे; अपने चित्त को प्रसन्नता से भर कर अपना लोक-परलोक सुधारेंगे।

भगवान ने बताया कि सम्यक संबुद्ध, प्रत्येक बुद्ध, क्षीणास्रव अरहंत और चक्रवर्ती सम्राट के अस्थि-अवशेषों पर ही पूजन-अर्चन के लिए भव्य स्तूपों का निर्माण किया जाता है।

इस प्रकार तथागत ने अपने पार्थिव शरीर के अवशेषों के बारे में आवश्यक सुझाव दिए। कुछ देर की नीरव शांति के बाद तथागत ने संक्षेप में थोड़े से अन्य उपदेश देकर पुनः मौन धारण कर लिया। इसी समय परिव्राजक सुभद्र भगवान से धर्म सीखने की आकांक्षा लेकर आया। आनंद ने उसे रोका और समझाया कि ऐसे समय तथागत को कष्ट नहीं देना चाहिए। परंतु सुभद्र नहीं मान रहा था। सुभद्र की धर्म-याचना के शब्द उस महान कारुणिक के कानों में पड़े। करुणा के सागर में वार उमड़ आया। शरीर छोड़ने के कुछ ही समय पूर्व उन्होंने परिव्राजक सुभद्र को अपने समीप बुला कर धर्म समझाया। उसकी जिज्ञासा पूरी हुई। सद्धर्म के प्रति उसकी शंकाएं दूर हुई। वह धन्य हुआ। भगवान के अंतिम उपदेश से लाभान्वित होकर वह मुक्ति-पथ का अनुगामी बना।

उधर पश्चिम में पूर्णिमा का चांद क्षितिज छूने लगा था। रात समाप्त होने आ रही थी। भगवान ने आंखें खोली, भिक्षु-संघ की ओर दृष्टिपात किया और उनके मुँह से सभी भावी साधकों के लिए अनमोल विरासत के रूप में उद्‌बोधन के यह अंतिम बोल मुखरित हो उठे –

वयधम्मा सङ्खारा,
अप्पमादेन सम्पादेथ।

सारे संस्कार व्यय-धर्मा हैं। जो कुछ संस्कृत याने निर्मित होता है वह नष्ट होता ही है। (विपश्यना साधना द्वारा) प्रमाद-रहित रह कर (अपने भीतर) इस सच्चाई को स्वानुभूति पर उतारो।

इस उद्‌बोधन के तुरंत बाद तथागत ने चंद क्षणों में ही एक के बाद एक, पहले से नौवें ध्यान की समापत्ति का साक्षात्कार किया और इंद्रियातीत निर्वाणिक अवस्था में स्थित हुए। इस अवस्था में श्वास की गति सर्वथा निरुद्ध हुई तो लोगों को भ्रम हुआ कि भगवान ने महापरिनिर्वाण प्राप्त कर लिया है। परंतु समीप बैठे महास्थविर अनिरुद्ध ने अपने सिद्धिबल द्वारा जाना कि यह शरीर-च्युति की अवस्था नहीं है। भगवान अभी जीवित हैं। कुछ ही क्षणों के बाद पुनः नौवें ध्यान की इंद्रियातीत निर्वाणिक अवस्था से निकल कर, भगवान ने एक बार फिर पहले से चौथे ध्यान-समापत्ति की यात्रा पूरी की और उसी अवस्था में महापरिनिर्वाण को प्राप्त हुए।

यों वैशाख पूर्णिमा की रात पूरी होते-होते अनगिनत जन्मों से भव-भ्रमण करता हुआ उनका यह अंतिम जीवन पूरा हुआ। भौतिक शरीर जीवन-शून्य हुआ। परंतु सारे विश्व के कल्याण के लिए उनके द्वारा उपदेशित धर्म जीवंत बना रहा।

अल्प समय पूर्व ही आनंद को दिए मार्गदर्शन के अनुसार कुशीनगर के मल्ल शासकों ने भगवान के निष्प्राण हुए पार्थिव शरीर को नई धुनी हुई रूई के पहलों और नये बुने हुए वस्त्रों में लपेट कर तेल-भरी द्रोणी में रखा। परंतु उसे चिता पर तत्काल नहीं चढ़ा सके। उन्हें सूचना मिली कि तथागत के प्रमुख शिष्य महास्थविर महाकाश्यप अन्य अनेक भिक्षुओं के साथ कुशीनगर की ओर आ रहे हैं। अतः उनके पहुँचने तक एक सप्ताह प्रतीक्षारत रहें। भिक्षु महाकाश्यप के पहुँचने पर ही दाह-क्रिया की गई। तदनंतर चिता को शीतल करके जो अस्थि-अवशेष प्राप्त हुए उन्हें अपने गणतंत्र की राजधानी में एक भव्य स्तूप बना कर उसमें प्रतिष्ठापित करने के लिए अपने अधिकार में ले लिए।

परंतु मगध के शक्तिशाली सम्राट अजातशत्रु ने जब यह सुना तो वह अपने सैन्यबल के साथ कुशीनगर पर चढ़ आया और उन अस्थियों पर अपने अधिकार का दावा करने लगा। पिछले इस एक सप्ताह के भीतर तथागत के महापरिनिर्वाण की सूचना द्रुत-गति से चारों ओर फैल गयी थी। इसे सुन कर इसी प्रकार वैशाली के लिच्छवी, कपिलवस्तु के शाक्य, अल्लकप्प के बुलिय, रामग्राम के कोलिय, वेठदीप के ब्राह्मण और पावा के मल्ल भी भगवान के पार्थिव शरीर के अवशेषों पर अपना-अपना अधिकार जताने के लिए सदल-बल कुशीनगर आ पहुँचे। इन सभी राज्यों और जनपदों के निवासी भगवान के श्रद्धालु अनुयायी थे, अतः भगवान के अस्थि-अवशेषों पर अपना-अपना अधिकार मानते थे। सभी शक्ति-संपन्न थे। इनमें से कोई भी अपना अधिकार छोड़ने के लिए तैयार नहीं था। बात बिगड़ती देख कर तथागत के एक श्रद्धालु शिष्य ब्राह्मण **द्रोण** ने बीच-बचाव किया और इस झगड़े का शांतिपूर्ण निपटारा करते हुए समस्त अस्थि-अवशेषों को आठ भागों में विभाजित कर, उन आठ राज्यों के शासकों को सौंपते हुए, उन्हें संतुष्ट किया, जिससे कि वे अपने-अपने राज्य की राजधानी में अपने हिस्से में प्राप्त हुए अस्थि-अवशेषों पर भव्य स्थूप का निर्माण कर मंगललाभी हो सकें और श्रद्धालु जनता को पूजन-अर्चन द्वारा पुण्यलाभ प्राप्त करने का अवसर दे सकें। बँटवारे के पहले जिस कलश में भगवान की सारी अस्थि-धातु रखी गई थी, उस खाली कलश को ब्राह्मण द्रोण ने अपने लिए मांग लिया ताकि वह श्रद्धापूर्वक उस कलश पर एक स्तूप का निर्माण कर सके। यों बँटवारा पूर्ण हो जाने के बाद, अस्थि-अवशेषों पर अपना भी अधिकार जताने के लिए पिप्पलीवन के मौर्य कुशीनगर पहुँचे, परंतु उस समय चिता के बुझे हुए कोयले ही बचे थे, जिन्हें ले जाकर उन्होंने अपनी राजधानी में उन पर एक स्तूप का निर्माण किया और इसी में संतोष माना।

लगभग २५०० वर्ष के लंबे अंतराल के बाद शाक्यों की पुरातन राजधानी कपिलवस्तु में एक पुराने स्तूप के खंडहरों में से भगवान के शरीर-अवशेषों की जो एक अस्थि-मंजूषा प्राप्त हुई है, अच्छा हो यदि इन अवशेषों पर आज के भारत की राजधानी में एक भव्य स्तूप का निर्माण करके, उन्हें श्रद्धापूर्वक पुनर्स्थापित किया जाय, ताकि भारत के ही नहीं, प्रत्युत विश्व भर के सभी श्रद्धालु लोग इनका पूजन-अर्चन करते हुए तथागत के प्रति अपने श्रद्धा-सुमन चढ़ा कर पुण्यलाभी हो सकें।

परंतु साधकों, भगवान द्वारा आनंद को दिए गए आदेश को ध्यान में रखते हुए हमें इन अवशेषों का उपयोग ध्यान के लिए ही करना उपयुक्त है। इन अवशेषों की धर्म-तरंगों से तरंगित हुए वातावरण में अंतर्मुखी होकर विपश्यना का अभ्यास करेंगे तो अनित्य-बोध की चेतना अधिक सबल होकर जागेगी और चित्त को विकारों से विमुक्त करने में सबल सहायिका सिद्ध होगी। इसी में हम साधकों का परम मंगल है, परम कल्याण है।

कल्याण मित्र,
स. ना. गो.

उस धरती पर हम स्वयं तपें!

(स.ना.गो.)

जिस धरती पर भगवान तपे,
उस धरती पर हम स्वयं तपें।

तप-तप पापों का शमन करें, उस धरती को हम नमन करें॥

पारमी पूर्ण कर हुए शुद्ध,
निज बोधि जगा कर हुए बुद्ध।

हम अपनी बोधि जगा कर ही, वस्तुतः बुद्ध को नमन करें॥

परिशुद्ध धर्म, परिपूर्ण धर्म,
जो संप्रदाय से दूर धर्म।

जीवन में धारण करके ही, हम सत्य धर्म को नमन करें॥

निज मुक्ति हेतु संघर्ष किया,
अंतर रिपुओं को जीत लिया।

संघर्ष करें हम संघ सदृश, यों शुद्ध संघ को नमन करें॥

हम राग-शरण में, द्वेष-शरण में,
तड़प रहे थे मोह-शरण में।

अब बुद्ध-शरण में, धर्म-शरण में, संघ-शरण में गमन करें॥

कितने दिन उलझन में बीते,
अंतर की जकड़न में बीते।

अब मिला मुक्ति का विमल पंथ, आओ इस पथ पर चरण धरें॥

कितने जन्मों का पुण्य फला,
मानव का दुर्लभ जनम मिला।

यह मुक्ति-विधायक धरम मिला, आओ पग-पग अनुगमन करें॥

कितने कल्मष, कितने विकार?
छाए मन पर नाना प्रकार।

प्रज्ञा जाग्रत कर अन्तर में, इन पापों का उपशमन करें॥

कायिक पापों से रहें दूर,
वाचिक पापों से रहें दूर।

मनसा पापों से रहें दूर, सत्कर्मों का संकलन करें॥

पापी की संगत दुखदायी,
सज्जन की संगत सुखदायी।

सत्संगति में जीवन बीते, हम संतों का अनुसरण करें॥

मिथ्या पथ पर भूले भटके,
किन अंधी गलियों में अटके।

अब मिला राजपथ विरज विमल, पग पग पग चल अधिगमन करें॥

सच है तो मति सम्मत होगा,
सच है तो सुख-हितकर होगा।

हम पशु सम अंधे बन न चलें, मानव हैं चिंतन मनन करें॥

मिथ्या मत का अभिमान रहा,
वह कितना थोथा ज्ञान रहा।

अब तो सम्यक दर्शन जागा, इस परम सत्य में रमण करें॥

था जाति गर्व, था वर्ण गर्व,
था संप्रदाय का महागर्व।

कितने दिन कांटों में उलझे, अब धर्म सुमन संचयन करें॥

ये जाति वर्ग के भेदभाव,
ये संप्रदाय के सड़े घाव।

कितने दिन कीचड़ में लिपटे, अब सौम्य धर्म का वरण करें॥

मिट्टी के फूटे हुए भांड,
ये सारे मिथ्या कर्म-कांड।

छूटे इन छिलकों का लगाव, अब धर्म-सार को ग्रहण करें॥

कितने आकुल, कितनी जकड़न,
कितने व्याकुल, कितनी तड़पन?

अब तक चलता था लोकचक्र, अब धर्मचक्र संचलन करें॥

प्रतिपल प्रतिक्षण प्रज्ञा जाग्रत,
उतरे पापों की परत परत।

धुल जायँ पुराने मैल सभी, अब नया मैल ना सृजन करें॥

था अंधकार अज्ञान घना,
बिन बोधि रहा मन मूढ़ बना।

जग जाय धर्म की ज्ञान-ज्योत, अब और पाप ना सृजन करें॥

जब-जब विषयों का स्पर्श हुआ,
तब-तब विकार का जन्म हुआ।

अब पल-पल प्रज्ञा जगे प्रबल, सब राग द्वेष उत्खनन करें॥

जिस देश ने हमको दिया धरम,
उस देश को भूल न जाएं हम।

मां इरावदी की धरती को, हम हों कृतज्ञ नित नमन करें॥

वह ब्रह्मदेश! वह धर्म देश,
पावन मनभावन स्वर्ण देश।

जिसने सँभाल कर धर्म रखा, नतमस्तक उसका स्मरण करें॥

जिस भारत में भगवान तपे,
उस पुण्य देश को नमन करें।

उस धर्म देश में धर्म जगे, जन-जन मंगल कल्याण करें॥

जिस धरती पर भगवान तपे,
उस धरती को हम नमन करें।

उस धरती पर हम स्वयं तपें, तप-तप पापों का शमन करें॥